JETIR.ORG ISSN: 2349-5162 | ESTD Year : 2014 | Monthly Issue
JOURNAL OF EMERGING TECHNOLOGIES AND INNOVATIVE RESEARCH (JETIR)
An International Scholarly Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

वैदिक साहित्य में वर्णित शैव धर्म–एक ऐतिहासिक मूल्यांकन

डॉ0 रवीन्द्र सिंह, एसोसिएट प्राफेसर, इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग, देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार (उत्तराखण्ड)–249411

वैदिक साहित्य से आर्यों के धार्मिक विश्वासों की जानकारी मिलती है।वैदिक युग के लोग अनेक देवी–देवताओं की पूजा करते थे।यजुर्ववेद में भी शिव के लिये अनेक मंत्रों का ज्ञान प्राप्त होता है, जिनमें उन्हें नीलकण्ठ, कृतवासा आदि कहा गया है। ऋग्वैदिक सूक्तों में रुद्र के स्वरूप व नामों का वर्णन किया गया है यजुर्ववेद के 16वें अध्याय (शतरुद्रिय प्रकरण) में शिव को 'पशूनापंति', पशुपति, जगतांपति (विश्व का स्वामी) शम्भूशंकर व शिव आदि नामों से पुकारा गया है।अथर्ववेद में रुद्र को भव, शर्व , पशुपति, भूतपति आदि कहा गया है। कूट शब्द – वैदिक, धार्मिक, शिव, पशुपति, भूतपति।

परिचय

वैदिक युग के साहित्य से आर्यों द्वारा की जाने वाली पूजा विधि व धार्मिक विश्वासों की जानकारी मिलती है।वैदिक युग के लोग अनेक देवी–देवताओं की पूजा करते थे। जिन्हें वे तृप्त व सन्तुष्ट करते थे, क्योंकि आर्य इन्हें संसार का सृष्टा, पालनकर्त्ता एवं संहारकर्त्ता मानते थे। उनका मानना था कि इन्द्र, अग्नि एवं वरुण आदि सब देवता एक ही सत्ता के अनेक नाम हैं, जिन्हें विभिन्न रूपों में व्यक्त किया जाता है।

शिव के नाम

ऋग्वैदिक युग के लोगों ने इन सभी देवताओं को प्रकृति की विविध शक्तियों के आधार पर तीन भागों में बांटा है।[1] जिसका वर्णन यास्क के निरुक्त से प्राप्त होता है, जिसमें इन देवताओं को उनकी शक्ति के आधार पर पृथ्विस्थान, अंतरिक्षस्थान, द्युस्थान इन तीन भागों में वर्गीकृत किया है। जिसमें अंतरिक्षस्थान देवताओं मे रुद्र को तेजस्वी युवक के रूप में वर्णित किया गया है। जो अत्यन्त तेजयुक्त है। इसे रुद्र का संहारक रूप भी माना गया है।[2] इस युग में रुद्र को अग्नि देवता के स्थान पर स्वीकार किया गया है । शतपथ ब्राह्मण में अग्नि को रुद्र कहा गया है। इसी में आगे कहा गया है कि अग्नि के 'शर्व ' तथा 'भव ' ये दो नाम रुद्र के आठ नामों में परिगणित होते हैं और शतरुद्रिय मंत्रों की व्याख्या करता हुआ ऋषि कहता है कि अग्नि का दाहक्ताशक्ति से पूर्ण अमर रूप ही रुद्र है। [3]

वैदिक युग में रुद्र की मानव रूप में कल्पना करते हुए उनके हाथों, होठों, रंग, उदर, भुजाओं, मुख आदि का वर्णन शिव रूप में किया गया है।

अंग्रेज विद्वान क्लेटन द्वारा प्रमाण दिए गए हैं कि रुद्र आर्यों के देवता है व शिव अनार्यों के । इस युग में आर्य अपने धार्मिक विचारों में स्वतंत्र थे, किन्तु धीरे–धीरे अनार्यों के सम्पर्क के कारण उनके देवता आर्य देवमण्डल में प्रविष्ट होने लगे, इस प्रक्रिया में अनार्यों के देवता शिव व आर्यों के देवता रुद्र का तादात्म होने लगा।[4]

यजुर्ववेद में भी शिव के लिये अनेक मंत्रों का ज्ञान प्राप्त होता है, जिनमें उन्हें नीलकण्ठ, कृतवासा (धर्म धारण करने वाला) आदि कहा गया है। ऋग्वैदिक सूक्तों में रुद्र के स्वरूप व नामों का वर्णन किया गया है कि उनके सिर पर जटाजूट, हाथों में प्रमुख अस्त्र धनुष बाण व वज्र बताया गया है। ऋग्वेद में ही उन्हें सिंह की भांति भीम व हनन के लिए उग्र व वृषभ भी कहा गया है। एक मंत्र में शिव को त्र्यम्बकं के नाम से भी पुकारा गया है।[5] यजुर्ववेद के 16वें अध्याय (शतरुद्रिय प्रकरण) में शिव को 'पशूनापंति', पशुपति, जगतांपति (विश्व का स्वामी) शम्भूशंकर व शिव आदि नामों से पुकारा गया है।[6]

अथर्ववेद में रुद्र को भव, शर्व , पशुपति, भूतपति आदि कहा गया है। ऋग्वेद में उन्हें रोगो का निवारण करने वाली शक्ति के रूप में भी वर्णित किया गया है।

समाज में रुद्र की महत्ता, विशिष्टता व उत्कृष्टता बढ़ती गई। जिसके प्रमाण अथर्ववेद व शतपथ ब्राह्याण में है जिसमें उन्हें सहस्राक्ष कहा गया, क्योंकि वे समस्त निकटवर्ती व दूरवर्ती पदार्थों में थे, वे समग्र धर्नुधरों में श्रेष्ठ थे। सम्पूर्ण सृष्टि में उनका विस्तार था, समस्त जगत उनके निर्देशों से संचालित होता है। यही नहीं उन्हें उषा का पुत्र तथा प्रजापति द्वारा रखे गए आठ नामों में एक अर्शन (वज्र) भी कहा गया है।[7]

इससे स्पष्ट है कि वैदिक युग में रुद्र को ही सृष्टिकर्त्ता, संहारकर्त्ता, पालनकर्त्ता एवं परम शक्ति के साथ–साथ जगत का मूल कारण व ब्रह्या स्वीकारा जाने लगा। सूत्रकाल के ग्रन्थों में भी शिव की अपनी अलग विशिष्टता थी। शिव की स्तुति उनके बारह नामों के साथ की जाती थी। उनके नामों के साथ इन्द्राणी, रुद्राणी,शर्वाणि और भवानी उनकी चार पत्नियों के नाम भी होते हैं। इसके अतिरिक्त अनेक कार्यों जैसे– मार्ग पार करते समय, चतुष्पथ पर पहुंचते समय, नदी पार करते समय, नाव पर चढ़ते समय, श्मशान आदि जाते समय उनके नाम की उपासना की जाती थी।

शैव धर्म

जिससे यह प्रमाणित होता है कि रुद्र का विकास एक विशिष्ट देवता के रूप में हो रहा था। वे प्रकृति के देवता के रूप में थे तथा जिनका प्रसन्न रहना मनुष्यों के लिए मंगलमय था। इन ग्रन्थों के साथ–साथ उपनिषदों व तैत्तरीय सहिंता में शिव को सर्वोच्च देवों का पद प्राप्त है। श्वेताश्वर उपनिषद पर दृष्टि डालने से स्पष्ट होता है कि वैदिक कर्मकाण्ड से अलग होने के कारण , कर्मकाण्ड से स्वतंत्र तथा विरोधी रूप में विकसित होने वाली दार्शनिक विचारधारर में, रुद्र को जगत की सर्वोत्कृष्ट शक्ति के रूप में स्वीकार किया गया है। इसमें वर्णित है कि एक मात्र रुद्र ही इस संसार को अपनी शक्ति से संचालित करते हैं। वे संसार के प्राणियों की सृष्टि, रक्षा व अन्त में संहार करते हैं। वे सबके अन्दर व्याप्त हैं यही नही वे सम्पूर्ण देवो की उत्पत्ति एवं अस्तित्व हेतु हैं। उन्होंने ही हिरण्यगर्भ रूपी प्रजापति को आदि में उत्पन्न किया था।[8]

उपनिषदों में शिव सम्बन्धी विचार उत्कृष्टता को प्राप्त कर चुका था। जिसका परिचय अनेक उपनिषदों से ज्ञात होता है। इनमें निर्गुण शिव के साथ सगुण शिव की भी कल्पना की गई है। जिसका प्रमाण शिव की अष्ट मूर्तियां हैं। नारायण–पूर्वतापिन्युपनिषद् में अष्ट मूर्तियों को नमस्कार किया गया है, जैसे– ऊँ महादेवाय नमः, ऊँ महेश्वराय नमः, ऊँ शूलपाणये नमः, ऊँ पिनाकधृषे नमः आदि शिव के अष्टाक्षर मंत्र उनकी अष्टमूर्ति के आठ भागों के रूप में माने जाते हैं।[9]

वैदिक युग के बाद महाकाव्य काल में भी भगवान शिव को सर्वश्रेष्ठ माना गया है। इसमें भगवान शिव के निर्गुण व सगुण दोनों रूपों का विवेचन तथा लिंग पूजा का वर्णन है। रामायण में भगवान शिव की उदारता व दयालुता सम्बन्धी कथाओं का वर्णन है। जिसमें शिव के सागर मंथन से उत्पन्न विष को पीने तथा भागीरथ की तपस्या से प्रसन्न गंगावतरण के समय गंगा के पृथ्वी पर पहुँचने से पहले शिव द्वारा अपनी जटा पर धारण करने का वर्णन है।[10] इस काल में शिव की उपासना केवल देवता ही नही बल्कि मानव व देवताओं के शत्रु दानव भी करते थे। जिसका प्रमाण विद्युतकेश दानव के पुत्र सुकेश पर पार्वती व भगवान शिव की कृपा करने का एवं उन्हें अमर बनाकर उसके रहने के लिए आकाशचारी विमान देने का वर्णन है। इसी प्रकार रावण द्वारा शिव भक्ति से वरदान स्वरूप चन्द्रहास नामक खड्ग प्राप्त करने का वर्णन है।

डॉ0 यदुवंशी ने अपनी पुस्तक 'शैव मत' में लिखा है कि रामायण से हमें यह पता चलता है कि शिव सच्ची भक्ति से प्रसन्न होते थे व तपश्चर्या द्वारा उनसे वरदान प्राप्त किए जा सकते थे।

रामायण के उत्तर काण्ड में राक्षसराज रावण के द्वारा जगहन्ट सुवर्णमय शिवलिंग अपने साथ ले जाने तथा बालू की वेदी पर उस शिवलिंग को स्थापित कर चन्दन व अमृत के समान सुगन्ध वाले पुष्पों से पूजन करने का वर्णन प्राप्त होता है। [11]

महाभारत मे शिव को सुख, भोग, स्वर्ग, मोक्ष व कर्मफल के दाता व सभी कामनाओं को पूरा करने वाला माना गया है। महाभारत के वन पर्व मे अर्जुन द्वारा शिव से पाशुपत अस्त्र की प्राप्त करने की कथा का वर्णन है। [12] श्रीनारायण को हिमालय पर्वत पर तपस्या करने के फलस्वरूप रुद्रदेव के दर्शन हुए थे। महाभारत में शिव को सर्वोच्च व शक्तिशाली देवता के रूप में माना गया है।

महाकव्यों के समय शैव धर्म को व्यापक लोकाचार प्राप्त हो गया था। यही नहीं लंका में भी उनकी पूजा होने लगी थी, महादेव, शम्भु, त्र्यम्बक, भूतनाथ आदि नामों से पुकारा गया । इससे यह स्पष्ट होता है कि महाकाव्य काल में भी शिव को सर्वश्रेष्ठ देवताओं का स्थान प्राप्त था एवं मनोवांछित फल प्राप्त करने के लिए आराधना की जाती थी।

मौर्य काल में अनेक धर्मों एवे सम्प्रदायों का प्रचलन था। जिनमें वैदिक धर्म भी एक था। उसमें अनेक वैदिक देवी–देवताओं की पूजा होती थी, जिनमें शिवजी भी एक थे। जिसके प्रमाण अनेक साहित्यों व पुरातात्विक माध्यमों से होते हैं। पातञजलि के महाभाष्य में शिव के रुद्रनाम का वर्णन अनेक जगहों पर किया गया है। इसके अतिरिक्त शिव की गणना लौकिक देवता के रूप में की गई है। महाभाष्य में शैवपुर या शिवपुर नामक उदीच्य ग्राम का वर्णन है। जिसका तात्पर्य उत्तर में स्थित ग्राम से है।यही नहीं इसमें शिव की मूर्ति बनाकर पूजा करने का वर्णन है तथा उनके अनेक नामों जैसे– रुद्र, गिरीश, महादेव, त्र्यम्बकं भव, सर्व आदि का उल्लेख है।[13] यूनानी राजदूत मेगस्थनीज ने डायनोसस के नाम से शिव पूजा का उल्लेख किया जो पर्वतीय क्षेत्रों में अधिक प्रचलित थी। इसी तरह कौटिल्य के अर्थशास्त्र में वर्णन है कि मौर्य युग में शिव पूजा का प्रचलन था।

जे0 एन0 बनर्जी ने भी कहा है कि सिकन्दर के आक्रमण के समय पंजाब में शिवि नाम की जाति थी जिनके विषय में यूनाानी इतिहासकारों ने लिखा है ि क वे पशुचर्म धारण करते थे।उनकी आयुध गदा थी जिसका चिन्ह वे पशुओं के ऊपर अंकित करवाते थे।[14]

शुंग शासनकाल वैदिक धर्म के पुर्नजागरण का काल था। इस काल में पौराणिक वैष्णव तथा शैव धर्म का भी विकास हुआ। यही नहीं शिवोपासना के प्रमाण शक, पह्लव, कुषाण आदि शासकों के सिक्कों पर बने शिव, नन्दी, त्रिशूल, की आकृतियाँ हैं। जिससे स्पष्ट होता है कि विदेशियों में भी शिव पूजा का प्रचलन था। जिसका प्रमाण शक शासकों की मुद्राओं पर बनी शिव की त्रिशूलधारी आकृति है तथा पह्लव नरेश गण्डफर्न के कुछ सिक्कों पर त्रिशूल व जटाणारी शिव का चित्र है तो कुषाण शासक विमकैडिफिसस के सिक्कों पर नन्दी व त्रिशूलग्राही चर्म धारण किए शिव की आकृति पायी गई है। [15] आर 0 जी0 भण्डारकर के अनुसार कुषाण काल में शिव की उपासना लिंग रूप में की जाती थी। जिसका प्रमाण इस नरेश की मुद्रा पर शिव के मानव लिंग रुप का अंकन प्राप्त होना है।[16] कुषाण वंशीय सिक्को पर शिव के महेश नाम से मिलता 'मयासेनो' नाम अंकित है तो एक पर शिव का ईशो नाम है जिसकी चार भुजाओं हैं, जिसमें एक हाथ में डमरू है। जिससे यह स्पष्ट होता है कि इस वंश के शासक शिव के भक्त थे तथा उस समय शिव की पूजा प्रचलित थी।

गुप्तकालीन अनेक अभिलेखों से पता चलता है कि शिव की उपासना मंदिरों में मूर्तियों के माध्यम से की जाती थी। जिसका प्रमाण चन्द्रगुप्त द्वितीय का प्रधान मंत्री वीरसेन शैव धर्मावलम्बी था उसने उदयगिरि की पहाड़ी पर एक शैव गुफा का निर्माण करवाया। इसी प्रकार कुमारगुप्त प्रथम के मंत्री पृथ्वीसेन के शिव मंदिर को दान देने व खोह में शिव लिंगो की स्थापना करवाने के प्रमाण प्राप्त होते है। इसी तरह स्कन्दगुप्त के बैल प्रकार के सिक्के उसकी शैव धर्म के प्रति आस्था को व्यक्त करते हैं।

इस काल में वैदिक देवताओं में से शिव, विष्णु आदि को मानवरूपधारी देवताअसें का बाना पहना उनके प्रति प्रगाढ़ भावना को भक्ति का स्वरूप दिया, जिससे शिव व उनके परिवार व शिव की शक्ति दुर्गा, चामुण्डा आदि देवियों की पूजा मंदिरों में मूर्तियों का निर्माण करके की जाने लगी। इसके प्रमाण गुप्तकालीन धार्मिक परम्पराओं, रीतियों व अवशेषों का अनुशीलन करने से प्राप्त होते हैं। गुप्त सम्राटों के शिलालेखों में दो अमात्यों का वर्णन है जिन्होंने शैव धर्म की प्रतिष्ठा का प्रचार करते हुए शैव मंदिरों का निर्माण करवाया।

हूण वंशीय राजाओं ने भी शैव धर्म को ग्रहण करके शैव मंदिरों में शिव लिंग की स्थापना करवायी तो दूसरी तरफ जटाजूट धारी, सर्प, गंगा, चन्द्रमा को शोभित होती शिव की सौम्य मूर्ति को बनवायां उस काल में कुछ सिक्कों पर त्रिशूल व नन्दी की आकृति अंकित है।

गुप्तकाल में शिव से सम्बन्धित साहित्य की भी रचना की गई, जिसमें मुख्य स्थान कालिदास का है, जो शिवोपासक था। इसने अपने प्रसिद्ध महाकाव्य 'कुमारसम्भव' व 'रघुवंश' की रचना का प्रारम्भ पार्वती परमेश्वरी की वन्दना से तथा शिव के चरित्र, महिमा व गुणों का वर्णन किया। कालिदास द्वारा रचित शाकुन्तलम का प्रारम्भ व अन्त शिव स्तुति से किया गया है और इसमें शिव के अष्ट रूपों की व्याख्या की गई है। यह माना गया है कि ब्रह्मा जगत के सृष्टा, विष्णु पालक व शिव संहारक हैं। इसी युग के मगुिरा स्तम्भ लेख से विदित होता है कि उपमितेश्वर तथा कपिलश्वर नामक शैव आचार्यों के सम्मान में शिवलिंगो की स्थापना की गई। शिव लिंगो की पूजा का विधान गुप्त काल से प्रारम्भ हुआ। इस काल में शिव को अर्द्धनारीश्वर के रूप में भी पूजा गया। इसी युग में ब्रह्मा, विष्णु व शिव की पूजा त्रिमूर्ति के रूप में की गई। [17] इस काल के पुराणों में भी शिव के महत्व को बताते हुए उन्हें देवों में श्रेष्ठ महादेव कहा है।

शैव धर्म का विकास वर्धन काल में भी होता रहा।इस काल में शैव धर्म के विभिन्न सम्प्रदायों का भी विकास हुआ। जिसका वर्णन वाणभट्ट व हुएनसांग के विवरण से प्राप्त होता है। हर्षचरित में बाणभट्ट द्वारा वर्णित है कि थानेश्वर नगर के प्रत्येक घर में भगवान शिव की पूजा की जाती थी तथा हुएनसांग के अनुसार वाराणसी शैव धर्म का प्रमुख केन्द्र था जहां अनेक मंदिर थे जो कि हर्ष व उसके समकालीन नरेश शशांक एवं भास्करवर्मा द्वारा बनवाये गए थे। [18] इस काल के अभिलेखों से ज्ञात होता है कि शिव का स्तवन 'ओम नमः शिवाय' के साथ होता था। देवाधिदेव की भावभीनी वन्दना व स्तुति की जाती थी।

राजपूत काल के अनेक शासकों ने शैव धर्म को अपनाया तथा उसके प्रसार हेतु शिव के अनेक पंदिरों का निर्माण करवाया। जिसमें चन्देल शासकों द्वारा बनवाया गया खजुराहो का कन्दरिया महादेव का मंदिर विशेष प्रसिद्ध है। इस काल में राजस्थान, गुजरात, बंगाल के अलावा दक्षिण भारत में भी शिव मंदिरों व मूर्तियों का निर्माण करवाया गया। जिसमें तंजौर का वृहद्दीश्वर मंदिर प्रमुख है।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि शिव की उपासना भारत में सिन्धु काल से शुरु होकर पूर्व मध्य काल तक होती रही एवं इसमें विकास के विविध आयाम भी जुड़ते गए। शिव को हिन्दू धर्म में महत्तवपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ एवं उनकी गणना त्रिदेवों में की गई।

सन्दर्भः–

1. ऋग्वेद – 1/139/11
2. यास्क का निरुक्त – 7/14-9/43
3. शतपथ ब्राह्मण – 5/3/1/10, 1/7/3/8, 6/1/3/8-18, 9/1/1/1-2
4. क्लेटन, ए0 सी0 –ऋग्वेद एण्ड वैदिक रिलिजन
5. ऋग्वेद – 2/33/3,2/33/11, 2/33/8, 7/59/12
6. यजुर्ववेद – 16/17, 16/40, 16/18, 16/41
7. शतपथ ब्राह्मण – 6/1/37,
8. श्वेताश्वर उपनिषद – 3/2, 3/4
9. नरायणपूर्वतापिन्यु उपनिषद – प्रथम खण्ड
10. बाल्मीकि रामायण, बाल काण्ड –45/18-26, 42/23-24, 43/2-11
11. वही, उत्तर काण्ड– 31/42-43
12. महाभारत ,वन पर्व – 38/40
13. पातंजलि, महाभाष्य – 5/2/36
14. बनर्जी, जे0 एन0 – दि डेवलपमेंट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ0 446
15. मिश्र, जयशंकर – प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, पृ0 123
16. भण्डारकर, आर0 जी0 – वैष्णविज्म शैविज्म एण्ड अदर माइनर सेक्टस, पृ0132
17. मिश्र, जयशंकर – वही पृ0 724
18. ईश्वर प्रत्यभिज्ञा– 4/1/1